International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

रामकाव्य में नारी–विमर्श

धर्मबीर
पीएच.डी. (हिन्दी)
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
पंजीकरण संख्या : 05–BB–544
Email : dslangyan@gmail.com
फोन नं0 : 9050235589

नारी आदिकाल से ही आदर के भाव से समादृस होती रही है। वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य तथा उतरवर्ती साहित्य एवं काव्यों में नारी कभी अपने अधिकारों को प्राप्त करती हुई कभी उनसे वंचित होती हुई अपनी निरन्तर गति से जीवन मार्ग पर चली आ रही है। वैदिक साहित्य में यदि नारी–नर के अधिकारों के समीप पहुंची हुई थी, तो बाद में धर्मशास्त्रों में नारी अनेकानेक प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों के फलस्वरूप अपने अधिकारों से भी वंचित की गई। इस प्रकार हम देखते हैं कि वैदिक काल से अपभ्रंश काल तक नारी अपने प्रति उदात्त भाव एवं निकृष्ट विचारों के सीमित केन्द्र में केन्द्रित रही है।

आलोच्य युग से पूर्व नारी भावना :–

वीरगाथा काल में नारी भावना अपना विशिष्ट स्थान रखती है। वीरगाथा कालीन साहित्य में राजनीतिक परिस्थितियों के मध्य वीर एवं श्रृंगार रस की प्रधानता का प्रतिपादन हुआ है। समाज के ऐसे वातावरण में नारी की स्थिति विचित्र थी। नारी के प्रति साहित्यकारों एवं कवियों का दृष्टिकोण भी उदार नहीं था। नारी के आन्तरिक सौन्दर्य, उसके शील और सद्गुणों का ह्रास हो चुका था, वह कामोपयोग की साधिका मात्र रह गयी थी।[1]

पुरूष ने नारी के बाह्य कलेवर अपनाकर उसके रूप सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसे काल विलास की वस्तुमात्र से अधिक कुछ न समझा। नारी के लिए नृप युद्धरत हो जाते थे, विवाह की वेदिना को रक्तरंचित कर देते थे। अतः नारी के प्रति समाज प्रचलित श्रृगारात्मक और विलासमयी भावना ही प्रधान रही है।

भक्तिकालीन सन्त एवं सूफी काव्य में निर्गुण ब्रह्म की प्रधानता होने के कारण, सन्त पुरूष उस अनन्त असीम अनादि ईश्वर की उपासना में लीन कामजनित नारी के वासनात्मक कामिनी रूप को घृणा की दृष्टि से ही देखते हैं। उन्होंने काम–मात्र को घृणित बताकर नारी–पुरूषों दोनों को एक–दूसरे के लिए कल्याणकारी बन्धन स्वरूप माना है। नारी के सत्रूप उसकी कल्याण विधायिनी शक्ति और जननी रूप तथा प्रतिव्रतरूप की वन्दना की है।

डॉ0 उषा पाण्डेय के शब्दों में सन्तों ने नारी के माया का ब्रह्मस्त्र, काम की कामिनी, वासना की कलुषित छाया समझकर उसकी भर्त्सना की है। किन्तु निर्गुण और सगुण दोनों से परे अपने असीम प्रियतम के प्रति अपनी कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति स्वयं नारी बनकर ही की है।[2]

डॉ0 आशा गुप्ता के अनुसार ''एक ओर यदि सूफी कवियों ने अपने काव्य में नर–नारी के लौकिक प्रेम का चित्रण किया है, तो दूसरी ओर नर–नारी के प्रेम के माध्यम से आत्मा–परमात्मा के संबंध की चर्चा करके रहस्यवाद का प्रतिपादन किया है।[3]

तुलसी के रामकाव्य में नारी विमर्श :–

भक्तिकालीन सामाजिक विषमता, राजनीतिक उलटफेर, धार्मिक श्रृंखला तथा नैतिक पतन की परिस्थितियों के मध्य निराश्रित जनता सन्तों की अटपटी, सारहीनवाणी तथा सूफी सन्तों की प्रेमगाथाओं को सुन चुकी थी। उनका निराकार निर्गुण ब्रह्म जनता के हृदय को ग्रह्य नहीं हो सका। ऐसी परिस्थितियों के मध्य रामानुजाचार्य की शिष्या–परम्परा में रामानन्द द्वारा प्रतिपादित रामकाव्य परम्परा में तुलसीदास ने राम के लोक–ग्राह्य, मर्यादावादी आदर्श पुरूषोत्तम रूप को अपने काव्य रूप में समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया है। उनका काव्य रामकाव्य के प्रतिनिधि कवि तुलसीदास ने मानस द्वारा हिन्दू समाज के समक्ष धर्म से अनुप्रणित जीवन का सुलभ मार्ग प्रशस्त किया है।

मानव जीवन का धर्म से गहरा संबंध है। धर्म दर्शन का व्यावहारिक पक्ष है। हमारे हिन्दू–समाज में दोनों का समन्वयात्मक संबंध है। यही कारण है कि प्रायः सभी धार्मिक

सम्प्रदायों का आधार कोई न कोई दर्शन रहा है, महान दार्शनिक धर्म–संस्थापक भी है। सभी ने सदाचार पालन को दार्शनिक उपलब्धि का सोपान माना है। तुलसी इसी विचारधारा के पोषक थे। उन्होंने पारमार्थिक ज्ञान और व्यावहारिक जीवन का सामंजस्य स्थापित किया है। उनका दर्शन धर्म–दर्शन है।[4]

तुलसी–पूर्व भारतीय दर्शन अपनी पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुंचने के पश्चात् ह्रान्सोन्मुख हो गया था। तुलसी के समय तक आते–आते तर्कपूर्ण दर्शक ने विश्वासपूर्ण भक्ति का स्थान ग्रहण कर लिया, भक्ति के क्षेत्र में सन्देह करना पाप समझा जाने लगा। तुलसी की दृष्टि मुख्यतः पौराणिक है और उनका दर्शन समन्वयवादी दर्शन है। तुलसी के राम समस्त कारणों से पूरे ईश है। वे बिना रथ गुण, नाम के सच्चिदानन्द विश्वरूप भगवान है। वेद उसे आदि अन्तहीन बनाते है।[5]

तुलसी के अनुसार जीवन के विभिन्न संबंध त्याग व उत्सर्ग के प्रतीक है। गोस्वामी जी के विचार में मानव–जीवन के विकास के लिए पतिव्रत धर्म एकनिष्ठा पतिप्रेम का प्रतिपादन किया गया है। उनकी दृष्टि में नारियों का चारित्रिक मापदण्ड पतिव्रत धर्म ही है। तुलसीदास के काव्य मे राम–परिवार के सभी सदस्यों के कर्त्तव्य संलग्न रूप उनकी आदर्श भावना के ही मूर्तरूप हैं। वे समाज के नारी–पुरूषों में भी इन्हीं रूपों के दर्शन करना चाहते हैं। तुलसीदास अपने काव्य में नारी के इन्हीं पतिव्रत आदर्श, कर्त्तव्यनिष्ठ मर्यादित रूप को चित्रित करते हैं और इन आदर्शों के विपरीत जो नारी आचरण करती है उसी की तुलसी भर्त्सना करते अथवा अपने पात्रों द्वारा कराते हैं। तुलसी को मानव–जीवन के विपरीत चरित्र मान्य नहीं हैं। अतः नारी ने उसी नारी की निंदा की है जिसने धर्म विरोधी आचरण किया है।

डॉ0 राजपति दीक्षित के कथानुसार ''गोस्वामी नारी प्रकृति, नारी–हृदय और नारी–चरित्र का अपार सागर बहा चुके थे। इससे भी उनकी लोक व्यवहार निपुणता प्रतिपादित होती है।[6]

भारतीय संस्कृति दर्शन एवं काव्य में नारी को सदैव से सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ है। तुलसी की नारी–भावना से तात्पर्य, नारी विषयक उनके दृष्टिकोण अथवा विचार है।डॉ0

उदयभानु सिंह के विचारानुसार नारी–भावना दो रूपों में अभिव्यक्त हुई है। नारी पात्रों के चरित्र–चित्रण में और नारी विषयक मान्यताओं के सैद्धान्तिक निरूपण मे। सैद्धान्तिक निरूपण के प्रतिपाद्य विषय दो प्रकार के हैं, नारी धर्म और नारी–निन्दा।[7] अतः तुलसीदास के निंदापरक उक्तियों के सही मूल्यांकन के लिए तुलसी पूर्व प्राचीन बाड्मय जिसमें नारी का वर्णन किया गया है।, तुलसी के युग की परिस्थियाँ, उनका जीवनवृत्त, उनकी धर्मभावना और उनके भक्तिदर्शन का ज्ञान भी आवश्यक है, फलतः तुलसीदास के सत् पात्र का का एक ही मापदण्ड है राम भक्ति, तुलसीदास में राम के प्रति श्रद्धा भक्ति है। सीता पतिव्रता नारियों का आदर्शरूप है। पति के साहचर्य से वह वन के दुखों में भी सुख का अनुभव करती है। वन के कंटक भी उसे सुमनवत् लगते हैं। प्राणप्रिय पति के चरण–कमलों के क्षण–क्षण में निहारते रहने में प्रिया सीता को मार्ग की थकावट भी नहीं होती है।[8]

अतः सीता आदर्शमयी तथा आराध्या की प्रिया पत्नी है। इसलिए तुलसी की आदर्श पात्र भी है। डॉ0 माताप्रसाद गुप्त के अनुसार ''सीता और कौशल्या का चरित्रांकन इसलिए सुन्दर हुआ है कि तुलसी के आराध्य की प्रेयसी और माता है अतः वह दूसरे रूप में भी तो चित्रित नहीं कर सकता था।[9]

तुलसीदास ने नारी–स्वभाव, नारी संसर्ग तथा नारी स्वतंत्रता आदि पर जो कटुक्तियाँ कहीं हैं, वह उन्होंने चाहे पुरूष द्वारा कहलवायी हों या नारी–पात्रों द्वारा अथवा स्वयं ही कवि रूप में कहीं हो, उनमें समान कठोरता मिलती है।

माताप्रसाद गुप्त के कथानुसार, ''प्रत्येक युग के कलाकार नारी–चित्रण में प्रायः उदार पाये जाते हैं किन्तु नारी–चित्रण में तुलसीदास बेहद अनुदार हैं।''

मिश्र बन्धुओं ने भी तुलसीदास को नारी के प्रति अनुदार तथा नारी–निंदक ही बताया है। गुप्त जी के समान उन्होंने कहा है कौशल्या व सीता के चरित्र इसलिए सुन्दर एवं पवित्र चित्रत किये हैं क्योंकि वे उनके आराध्य से संबंधित हैं। अन्य नारियों को सहज जड़ अपावन तथा स्वतंत्र होने के अयोग्य ही माना है।[10]

तुलसी की मनोभावना नारी–निदक नहीं थी, अपितु तुलसी के समाज की ऐसी ही परिस्थिति थी कि समय नारी–चरित्र को सुदृढ़ बनाने के लिए, उसके चरित्र दोषों की स्थान–स्थान पर भर्त्सना करना निंदा करना भी अपेक्षित था। अन्यथा तुलसी ने नारी निंदा नहीं की है। डॉ0 रामकुमार वर्मा के कथानुसार ''तुलसीदास ने नारी–जाति के प्रति बहुत आदर–भाव प्रकट किया है। पार्वती, अनसूया, कौशल्या, सीता ग्राम–वधु आदि की चरित्र–रेखा पवित्र और धर्मपूर्ण विचारों से निर्मित की गई है।

कुछ आलोचकों का कथन है कि तुलसीदास ने नारी निंदा की हैं और उन्हें 'ढ़ोल–गंवार' की श्रेणी में रखा है।

किन्तु यदि मानस पर निष्पक्ष दृष्टि डाली जाए तो ज्ञान होगा कि नारी के प्रति भर्त्सना के प्रमाण उसी समय उपस्थित किए गये हैं। जब नारी ने धर्म के विपरीत आचरण किया है अथवा निन्दात्मक वाक्य कहने वाले व्यक्ति वस्तु स्थिति देखते हुए नीतिमय वाक्य कहते हैं ऐसी स्थिति में वे कथन तुलसीदास के न होकर परिस्थिति विशेष में पड़े हुए व्यक्तियों के समझने चाहिए। तुलसी ने भक्तिभावना से प्रेरित होकर या समाज को अपकर्ष से उत्कर्ष की ओर ले जाने की भावना से ही नारी निदा की है, अन्यथा राम–जननी कौशल्या, जगत्–जननी सीता–पतिपरायण अनुसूया, आदि के आदर्श रूपों में उन्होंने नारी की प्रशंसा भी की है।

नारी को गृहस्थ का केन्द्र बिन्दू मानकर उसकी परिधि में समाज, धर्म, नीतिपरक आचरण करती हुई नारी के सत् रूप की सदैव प्रशंसा की गई है, उसके गुणों को आदर्श का रूप प्रदान किया गया है, इसके विपरीत नारी के द्वारा समाज–विरूद्ध, धर्म विरूद्ध अथवा नीति विरूद्ध आचरण करना तुलसीदास को सह्य नहीं रहा, तुलसीदास के विचार में नारी के प्रति मर्यादा एवं पतिव्रत कर्म सर्वोपरि रहा है। यद्यपि यह कामना नारी से ही नहीं अपितु पुरूष से भी एक पत्निव्रत पालन तथा मर्यादापालन की अपेक्षा रखते है। किन्तु समाज की आधारशीला, ग्रहस्थ की प्राण–स्वरूप नारी से धर्म मर्यादा पतिव्रत धर्म तथा समाज अनुकूल आदर्शों की दृढ़ रखने की वे अधिक अपेक्षा रखते हैं। किन्तु समाज की आधारशीला, ग्रहस्थ की प्राण–स्वरूप नारी से धर्म मर्यादा, पतिव्रत धर्म तथा समाज अनुकूल आदर्शों को दृढ़ रखने की वे अधिक

अपेक्षा रखते हैं, उसी का परिणाम है कि चार सौ वर्षों से निरन्तर समाज, तुलसी द्वारा प्रतिपादित आदर्शों को मानव–समाज के आकार का मापदण्ड मानकर दृढ़ता से पालन करता आ रहा है।

श्रृंगारिक प्रभाव होने पर भी तत्कालीन नारी समाज के लिए पतिव्रत धर्मपालन का विधान ही करती है और पतिव्रत धर्म में ही नारी की गति बताते है। उनके कथनानुसार नारी को उपासना, प्रार्थना, धार्मिक अनुष्ठानों का फल देने वाली है। इसके अतिरिक्त अन्य सभी संबंध पति के बिना दुखदायी है।

केशव के रामकाव्य में नारी–विमर्श :–

केशवदास नारी के लिए पति–धर्म ही सब प्रकार के सुखों का मूल समझते हैं। पतिव्रता नारी को मानसा, वाचा, कर्मणा पति की ही सेवा करनी चाहिए यही उसका परमोधर्म है। विलासी–वातावरण से प्रभावित होने पर भी नारी को एकनिष्ठ तथा आदर्श पतिव्रता के रूप में ही रखना चाहिए।

पति गूंगा, बहरा, अंधा, पंगु आदि कैसा भी हो किन्तु आदर्श नारी को पति सेवा ही परमोधर्म समझ कर तथा एकनिष्ठ होकर उसी में रत रहना चाहिए। नारी को पति के साथ ही सत होने का आदर्श माना है। केशवकालीन समाज अन्तःपुर की साज–सज्जा विलास–कक्ष की शोभा को अनिवार्य उपकरण समझी जाती थी। यह विलास वैभव में ऐश्वर्य की वस्तु मानी गई है। उस समय की नारी संगीत, कला, वाणी–वादन, नृत्य आदि में निपुण होती थी।

रावण के प्रति मन्दोदरी के कथन पतिव्रत सीता को साधारण प्राणी न समझों, से स्पष्ट होता है कि उस समय पतिव्रता आदरणीय तथा श्रद्धा की पात्र होती थी। धार्मिक काम बिना पत्नी के पूर्ण नहीं समझे जाते थे। रामचन्द्र के द्वारा ऋषियों ने यह उत्तर दिया था :

''धर्म–कर्म कछु कोजई, सफल तरूणि के साथ

ता बिन जो कछु का जई निष्फल सोई नाथ।।[11]

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

अर्थात् पत्नि के साथ ही धर्म कार्य करने चाहिए अन्यथा वो सफल नहीं समझे जाते।

केशव के विचार में पतिव्रता, गुणशीला कर्त्तव्यपरायण पत्नी के त्याग को कल्याणकारी बताया है।

भरत के द्वारा प्रियवादिनी, पवित्र तथा पतिव्रता सीता के त्याग का वेद–विरूद्ध बताकर नारी के आदर्श एवं मर्यादित रूप को आदर प्रदान किया गया है।

सामान्य रूप से पतिव्रता, कर्त्तव्यनिष्ठा, गुणशीला तथा आदर्श नारी के सत् रूप को समाज में सर्वोपरि स्थान था।

धार्मिक कृत्यों के प्रतिपादन में नारी का विशेष महत्व था। पतिव्रता प्रियवादिनी तथा सर्वगुण–सम्पन्न पत्नी का त्याग वेद विरोधी समझा जाता था। नारी के असत् रूप को सदमार्ग का अवरोधक, अविधा माया का प्रतीक तथा मानव को कुमार्ग पर भ्रमित करने वाला माना जाता हैं राम के चरित्र की आदर्शवादिता को अपनी कसौटी बनाने वाले उन कवियों को नारी की सामान्य दुर्बलताएँ क्षम्य न होकर आलोचना तथा निंदा का कारण बनी है, परन्तु साथ ही नारी का आदर्श रूप लोक और समाज में कर्त्तव्य की मंजुल प्रशस्त करने वाला स्वरूप इनको काम्य और वर्गनीय भी रहा है।[12]

केशव को धर्मनिष्ठा, कर्त्तव्य–परायण पतिव्रता नारी का आदर्श रूप ही अभीष्ट रहा है। इसलिए नारी के विलासी रूप की निंदा तथा आलोचना करते हुए आदर्श नारी को महत्व प्रदान किया है। केशव ने भी अपने काव्य में तुलसी के समान ही पतिव्रता–धर्म तथा मर्यादित जीवन को नारी–जीवन का मापदण्ड स्वीकार किया है। पति सेवा में ही नारी जीवन को सफल समझा जाता है।

रामभक्ति काव्य में नारी का चित्रण विविध प्रकार से हुआ है। सामाजिक संबंधों के आधार पर वहां नारी के अनेक रूप अंकित किए गये हैं और नारी माता, भगिनी, पुत्री, सखी,

पत्नी, योद्धा, राजनीतिज्ञ, सेविका, परिचारिका, तपस्विनी रूपों में चित्रित की गयी है। अन्य नारियों में कवि ने विवाह तथा वनगमन के विशेष अवसरों पर नारी की सभी मनःस्थिति और समाज में उसका सभी अवस्थाओं तथा भिन्न–भिन्न स्थितियों के अनुसार विविध भावों और मनोदशाओं के चित्र अंकित हुए हैं। धार्मिक दृष्टि से नारी के मातृरूप और जगजननी की कल्पना करते हुए, सियाराममय सब जग जननी कहकर नारी रूप में आलोकिकता का चित्रण किया है।

रामकाव्य में नारी प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष की पूर्णत्व है। राम के उपासकों ने सीता और राम दोनों की संयुक्त उपासना भी इसी भाव से की है। इनके काव्य में सीता, राम, पार्वती–शिव आदि में नारी की संयुक्त उपासना की गई है। अतः इनके काव्य में नारी भावना दूषित नहीं मानी जा सकती। रामकाव्य का प्रमुख उद्देश्य यही है कि वासना में अभिभूत होना पतनकारी है। उस पर विजय प्राप्त करना ही लाभदायक है। इसलिए रामकाव्य के माध्यम से कामाभिभूता नारियों के आदर्श और धर्म के मंगलकारी रूप में सहयोग देने वाली नारियाँ महाकाव्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

सन्दर्भ–ग्रंथ–सूची :–

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य में नारी, डॉ0 सरला दुबे, पृ0 68
2. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना, डॉ0 उषा पाण्डेय, पृ0 82
3. मध्ययुगीन सगुण एवं निर्गुण हिन्दी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन– डॉ0 आशा गुप्ता, पृ0 651
4. तुलसी काव्य मीमांसा, डॉ0 उदयभानु सिंह, पृ0 322
5. सोई सच्चिदानन्दन रामा, अज विज्ञान रूप बल धामा।
   व्यापक व्याप्स अखण्ड अन्नता, अखिल अमोध शक्ति भवन्ता।।
   तुलसी–तुलसी ग्रन्थावली, प्रथम खण्उ, पृ0 47
6. तुलसीदास और उनका युग, डा0 राजपति दीक्षित, पृ0 474

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

7. तुलसी–काव्य–मीमांसा, डॉ0 उदयभानु सिंह, पृ0 336
8. कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता मानस 3/35–4, पृ0 739
9. तुलसीदास, माताप्रसाद गुप्त, पृ0298
10. हिन्दी नवरत्न, मिश्र बन्धु, पृ0 168
11. केशव कौमुदी अथवा रामचन्द्रिका–उत्तरार्ध–पैंतीसवां प्रकाश, दोहा 3, पृ0 237
12. मध्य युगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना, डॉ0 उषा पाण्डेय, पृ0 139